जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

वस्तु में असत्य की सत्ता ही नहीं है।

– बिन्दु में सिंधु, पृष्ठ-33

वर्ष : 25, अंक : 22
फरवरी (द्वितीय) 2003

सम्पादक : पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
प्रबन्ध सम्पादक : पण्डित संजीवकुमार गोधा

आजीवन शुल्क : 251 रुपये
वार्षिक शुल्क : 25/-, एकप्रति : 2/-

अलीगढ़ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

अलीगढ़ और हाथरस के मध्य सासनी गाँव के निकट अलीगढ़ - आगरा रोड पर आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के प्रभावना योग से नवीनतम निर्मित मंगलायतन तीर्थधाम का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव 31 जनवरी से 6 फरवरी 03 तक बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद एवं पण्डित अशोककुमारजी लुहाड़िया अलीगढ़ के निर्देशन में बाल ब्र. अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना के प्रतिष्ठाचार्यत्व में सानन्द सम्पन्न हुआ। सह प्रतिष्ठाचार्य के रूप में ब्र. हेमन्त गांधी थे। स्टेज का सम्पूर्ण कार्य पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिन्दवाड़ा और उनके सहयोगी देख रहे थे।

प्रतिदिन पंचकल्याणकों पर हुए डॉ. भारिल्ल के प्रवचन मुख्य आकर्षण के केन्द्र थे। साथ में वयोवृद्ध विद्वान कैलाशचंदजी बुलंदशहर, डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित विमलचन्दजी झांझरी उज्जैन, ब्र. सुमतप्रकाशजी आदि विद्वानों के प्रवचन एवं कक्षाओं का लाभ भी समाज को प्राप्त हुआ।

इस पंचकल्याणक की सबसे बड़ी विशेषता विदेशों से पधारे सैंकड़ों भाई-बहिन थे, जिन्होंने न केवल इसका भरपूर लाभ लिया; अपितु इस तीर्थ के निर्माण और पंचकल्याणक में सर्वाधिक आर्थिक सहयोग दिया।

प्रथम दिन केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने ज्ञानदीप का प्रज्ज्वलन करके कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

अंतिम दिन उप-प्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने तीर्थधाम मंगलायतन का उद्घाटन किया। उनके साथ मुख्यअतिथि के रूप में संविधान वेत्ता एल.एम.सिंघवी भी थे।

श्री पवन जैन ने अपने अथक परीश्रम एवं अपनी संचालन कुशलता से न केवल अल्पकाल में इस नवीनतीर्थ का निर्माण कर दिया; अपितु जिस अपार जन समुदाय की उपस्थिति में सुव्यवस्थित व्यवस्था के साथ प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न किया है, वह अपनेआप में अद्वितीय है। सबसे बड़ी बात यह रही कि इस प्रसंग पर न केवल मुमुक्षु समुदाय के सभी ग्रुपों के लोग एक मंच पर एक साथ उपस्थित थे, अपितु वे लोग भी बहुत संख्या में आये थे, जो लोग स्वामीजी की इस आध्यात्मिक क्रान्ति को पसंद नहीं करते हैं। सबको एक स्टेज पर लाकर दि. जैन समाज की एकता का जो आदर्श प्रायोगिक रूप में प्रस्तुत किया है, उसके लिये श्री पवन जैन की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है।

पवन जैन की अबतक की कार्यकुशलता देखकर यह विश्वास होता है कि भविष्य में भी जो उन्होंनें सोच रखा है; वह भी निश्चितरूप से क्रियान्वित होगा।

इस अवसर पर कुल 6 लाख का सत्साहित्य एवं 2 लाख 75 हजार के कैसिट घर-घर पहुँचे। जिसमें से टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का 1लाख 85 हजार का सत्साहित्य तथा 7600 घण्टे के सी.डी. एवं 1129 घण्टे के ऑडियो प्रवचन घर-घर पहुँचे।

साहू रमेशचंदजी जैन 'मास कम्यूनिकेशन' के अध्यक्ष

सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज के सर्वमान्य नेता तथा अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद्, कुन्दकुन्द भारती न्यास आदि संस्थाओं के अध्यक्ष, भारतीय ज्ञानपीठ एवं साहू जैन ट्रस्ट के प्रबंध न्यासी साहू श्री रमेशचंदजी जैन को विश्वस्तरीय संचार माध्यम एवं सूचना प्रौद्यौगिकी के प्रमुख संस्थान **मास कम्यूनिकेशन** का मानद अध्यक्ष मनोनीत किया गया। उनका कार्यकाल आगामी दो वर्ष तक रहेगा। यह एक महत्त्वपूर्ण सम्मान है।

साहूजी को यह गौरव प्राप्त होने पर देशभर के विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधिओं एवं समाज के गणमान्य लोगों ने हार्दिक बधाई और अभिनन्दन की भावनाएं प्रेषित की हैं। कुन्दकुन्द भारती प्रांगण में भी दक्षिण भारत जैन सभा के शताब्दि समारोह में इस निमित्त साहूजी का विशेष अभिनन्दन किया गया।

टोडरमल स्मारक परिवार की ओर से उन्हें हार्दिक बधाई।

अनुभूतिस्वरूप भगवान आत्मा को अनुभूति प्राप्त करने की भी आकुलता क्यों, व्याकुलता क्यों ? लगता है, यही तेरी कचास है। **– सत्य की खोज, पृष्ठ-202**

सम्पादकीय –

हरिवंशपुराण : एक अनुशीलन

24

– रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे .....)

किसीसमय सद्भद्रिलपुर नगर में राजा मेघरथ रहता था। उसकी स्त्री का नाम सुभद्रा था। उन दोनों से दृढ़रथ पुत्र हुआ। उसी नगर में धनदत्त नामक सेठ रहता था, उसकी पत्नी का नाम नन्दयशा था। नन्दयशा सेठानी से सुदर्शना और सुज्येष्ठा नाम की दो कन्यायें तथा धनपाल, जिनपाल, देवपाल, अर्हद्दास, जिनदास, अर्हद्दत्त, जिनदत्त, प्रियमित्र और धर्मरुचि ह्न ये नौ पुत्र हुए।

राजा मेघरथ एवं सेठ धनदत्त ने अपने नौ ही पुत्रों के साथ मुनिदीक्षा ले ली। साथ ही सुभद्रा सेठानी एवं उसकी दोनों पुत्रियाँ दीक्षित हो गईं। एकबार धनदत्त मुनि, मेघरथ मुनि एवं उनके गुरु समुन्दर मुनि बनारस आये। वहाँ उनको केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई और कालान्तर में मुक्त हो गये। उस समय धनदत्त मुनिराज की पूर्व पत्नी नन्दयशा गर्भवती थी। उसके धनमित्र नामक पुत्र उत्पन्न होने पर वह भी दीक्षित हो गई।

धनदत्त के सभी नौ के नौ पुत्र भी मुनिदीक्षा लेकर एक शिला पर विराजे थे। मुनियों की जन्मदात्री माता आर्यिका नन्दयशा ने उन्हें देख धर्मानुराग से ऐसी भावना की ये महान आत्मायें पुनः मेरी कूंख से ही जन्म लें, ताकि मेरा जीवन धन्य हो सके। आर्यिका बहिनों की भी उन मुनियों के प्रति ऐसी भक्तिभावना फलवती हो जाय तो कोई कठिन बात नहीं है। ऐसा ही हुआ। अगले जन्म में मात, पुत्र एवं पुत्रियाँ अच्युत स्वर्ग में देव हुए। वहाँ बाईस सागर तक उत्कृष्ट सुख भोगकर, वहाँ से चयकर हे राजन् ! तुम्हारी स्त्री, पुत्रियाँ एवं पुत्र हुए हैं।

नन्दयशा का जीव तो तुम्हारी रानी सुभद्रा हुआ है। सुदर्शना और सुज्येष्ठा के जीव क्रम से कुन्ती और माद्री हैं तथा धनपाल आदि के जीव वसुदेव के सिवाय नौपुत्र हुए हैं।

वसुदेव के भवान्तर :– वसुदेव का जीव मागध देश के शाली ग्राम नगर में रहनेवाले अत्यन्त दरिद्र श्रावक के यहाँ पुत्र हुआ, जिसे जरा भी सुख नहीं था। गर्भ में आते ही पिता मर गया और जन्म देकर माँ भी स्वर्गवासी हो गई। मौसी ने उसका पालन-पोषण किया। आठ वर्ष का होते-होते मौसी भी मर गई। वह राजगृह नगर में मामा के घर रहने लगा। उसका शरीर मलिन था, शरीर से बकरे के बच्चे की तरह दुर्गन्ध आती थी। ऐसी स्थिति में भी वह अपने मामा की लड़की से शादी रचाना चाहता था। विवाह की बात तो एक ओर रही, मामा की पुत्रियों ने उसे घर से निकाल दिया। दुःखी होकर वह आत्मघात करने वैभार पर्वत पर गया; परन्तु वहाँ उसे मुनिराजों ने रोक लिया। वहाँ मुनिराजों से धर्म/अधर्म का फल सुनकर उसने अपनी आलोचना की और शान्तभाव से मुनियों से स्वयं ने मुनि दीक्षा ले ली और रत्नत्रय का धारक हो कठिन तप करने लगा। मुनि अवस्था में उसका नाम नन्दिषेण था। वह तप के प्रभाव से अनेक ऋद्धियों का धारक, ग्यारह अंगो का धारी एवं घोर परिषह-विजयी उत्तम साधु हो गया। इसप्रकार मुनि नन्दिषेण को तप करते हुए जब कई हजार वर्ष बीत गये तब एक दिन इन्द्र ने देवों की सभा में नन्दिषेण मुनिराज के तप की प्रशंसा की और परोक्ष नमस्कार किया।

उन्हीं देवों में से एक देव मुनि नन्दिषेण की परीक्षा करने के लिए मुनिवेष धरकर मुनिनन्दिषेण के पास पहुँचा और कहने लगा कि ह्न हे वैयावृत्य तप में प्रसिद्ध मुनि! मेरा शरीर व्याधि से पीड़ित है, कुछ कीजिए।

नन्दिषेण ने कहा ह्न तुम्हारी किसतरह के भोजन में रुचि है?

मुनिरूपधारी देव ने कहा ह्न पूर्व देश के धान का सुगन्धित भात, पांचाल देश की मूँग की स्वादिष्ट दाल, पश्चिम देश की गायों का तपाया घी, कलिंगदेश की गायों का मधुर दूध और नाना प्रकार के व्यंजन यदि मिल जावें तो अच्छा हो; क्योंकि मेरी रुचि इन्हीं वस्तुओं में अधिक है।

नन्दिषेण ने ऐसी विचित्र इच्छा प्रगट करने पर भी उत्साह और भक्तिभाव से कहा ह्न 'मैं अभी लाता हूँ'। विरुद्ध दिशाओं के देशों की चाह होने पर भी उनके मन में खेद उत्पन्न नहीं हुआ और गोचरी वेला में जाकर तथा उक्त सब आहार लाकर उन्होंने उक्त मुनि को दे दिया तथा कृत्रिम मुनि के मलिन शरीर को बिना ग्लानि के अपने हाथों से धोया। उनका वैयावृत्ति करने में किंचित् भी उत्साह कम नहीं है।

मुनि नन्दिषेण की ऐसी मुनि भक्ति एवं वैयावृत्ति देखकर देव अपना असली स्वरूप में प्रगट होकर बोला ह्न हे ऋषे ! देवों की सभा में इन्द्र ने आपकी जिसप्रकार स्तुति की थी, मैं वैसी ही प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। अहो! आपकी ऋद्धि, धैर्य, ग्लानि जीतने की क्षमता और संशय रहित आपका शासनवात्सल्य ह्न सभी आश्चर्यकारी हैं। आप उत्तम मुनिराज हैं। इसतरह स्तुति करके देव स्वर्ग को चला गया।

नन्दिषेण मुनि ने तपश्चरण में पैंतीस हजार वर्ष बिताकर अन्तिम समय छह माह का संन्यास ले लिया। वे अपने शरीर की वैयावृत्ति न स्वयं करते न दूसरों से कराते। इतनी कठिन तपस्या करने पर भी अन्तिम समय में रागवश उन्होंने निश्चय में यह भावना भायी कि 'मैं ह्न अग्रिम भव में लक्ष्मीवान एवं सौभाग्यवान होऊँ।' इस निदान से उन्होंने अपनी आत्मा को कर्मबन्ध से बद्ध कर लिया। यदि ऐसा निदान नहीं होता वे निश्चित ही तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करते। दर्शन, ज्ञान, चारित्र व तप ह्न चारों आराधनाओं की आराधना करके महाशुक्र स्वर्ग में इन्द्रतुल्य देव हुये और वहाँ साढ़े सोलह सागर तक सुख से समय बिताया।

हे राजन! वही तेरा पुत्र देवों के सुख भोग कर अन्त में वहाँ से चयकर तेरी सुभद्रा नामक रानी से वसुदेव नाम का पुत्र हुआ है। **(क्रमशः)**

कहान-संदेश

धर्मी की मंगल भावना

7

जिस काल में जो पर्याय होना हो वही होती है, तीर्थंकर को भी जो पर्याय होना हो वही होती है, उसे इधर-उधर या आगे-पीछे नहीं कर सकते - इसप्रकार क्रमबद्ध की प्रतीति होने पर जो कर्तृत्त्वबुद्धि से थक गया है, वह पर के कर्तृत्त्व के अभिमान को छोड़कर आत्मोन्मुख होता है, उसे सम्यग्दर्शन होता है। संसार से सचमुच थके हुये को ही सम्यग्दर्शन होता है। उसे अब ऐसी इच्छा नहीं है कि मैं कुछ करूँ और उससे मुझे कुछ प्राप्त हो; क्योंकि क्रमबद्धपर्याय की दृष्टिवान को प्रत्येक द्रव्य की पर्याय स्वयं क्रमबद्ध होती है - ऐसा निर्णय हो गया है।

जब प्रत्येक पदार्थ की पर्याय क्रमबद्ध होती है, ऐसा दृढ़ निश्चय हो गया तो फिर परद्रव्य की पर्याय को बदलना तो रहा नहीं, अपनी पर्याय भी जो जिस क्रमानुसार होना है, वही होती है, इसलिये उसे भी बदलना नहीं रहा। जो पर्यायें क्रमानुसार होना हैं, उनका ज्ञाता ही है। अहाहा ! यह वीतरागता है। भगवान सर्वज्ञ के देखे अनुसार प्रत्येक द्रव्य की तीनोंकाल की पर्यायें जिसकाल जो होना हैं, वही होना है। भगवान ने देखीं है इसलिये होना है ऐसा नहीं है; किन्तु प्रत्येक द्रव्य की पर्याय स्वयं से ही क्रमबद्ध जो होना है, वही होती है। उन्हें दूसरा तो कोई बदल नहीं सकता; किन्तु स्वयं भी अपने में होनेवाले क्रमानुसार परिणाम को बदल नहीं सकता। मात्र जान सकता है।

क्रमबद्धपर्याय का निर्णय होने पर दृष्टि द्रव्यस्वभाव पर ही जाती है। तभी क्रमबद्धपर्याय का सच्चा निर्णय हुआ - ऐसा कहा जा सकता है। पर्यायक्रम की ओर देखने से क्रमबद्ध का सच्चा निर्णय नहीं हो सकता। ज्ञायक की ओर ढलता है तब ज्ञायक का सच्चा निर्णय होता है। और उस निर्णय में अनंत पुरुषार्थ आता है। ज्ञान के साथ आनन्द का स्वाद आये तो उसे सम्यग्दर्शन हुआ है। सर्वज्ञ ने देखा वैसा होता है। पर्याय क्रमबद्ध होती है उस निर्णय का तात्पर्य ज्ञान स्वभाव पर दृष्टि करना है। आत्मा कर्ता नहीं है; किन्तु ज्ञाता ही है।

अहाहा ! सारी दुनियाँ का विस्मरण हो जाये ऐसा तेरा परमात्मतत्त्व है। अरेरे ! तीन लोक का स्वामी होकर राग में रुक गया ! राग में तो दुख की ज्वाला है। वहाँ से दृष्टि हटाकर जहाँ सुख का सागर भरा है वहीं दृष्टि लगा दे राग को भूल जा। यद्यपि तेरे परमात्मतत्त्व को पर्याय ही स्वीकार करती है; किन्तु पर्यायरूप मैं हूँ इस बात को भूल जा अविनाशी भगवान के समक्ष क्षणिक पर्याय का क्या मूल्य है ? जब पर्याय को भूलने की बात कह रहे हैं; तब राग और शरीर की बात न भूलने की बात ही कहाँ रही? अहाहा ! यह सुनकर एक बार तो मुर्दे खड़े हो जायें। मुर्दों में जान आ जाये - ऐसी बात है। क्रमबद्ध की बात सुनते ही उछलकर अन्तर में चला जाये - ऐसी यह बात है।

अहाहा ! आनंद का सागर अन्तर में उछल रहा है उसमें डुबकी लगाओ।

सम्यक्त्व सन्मुख जीव को चैतन्य का लक्ष्य आ गया है, इसलिये उसका जोर चैतन्य की ओर मुड़ रहा है। यही स्वभाव है ... यही स्वभाव है ... इसप्रकार स्वभाव में जोर होने से हम उसे अल्प ऋद्धिवान क्यों देखें ? मिथ्यादृष्टि होने पर वह सम्यक्त्व सन्मुख हो गया है, वह सम्यक्त्व लेगा ही।

जीवों को अभी अपने स्वभाव का माहात्म्य ही नहीं आया है। भाषा में आत्मा की महिमा करते हैं; किन्तु अन्तर की महिमा नहीं आती। भाई ! जब तक तू हृदय में आत्मा को स्थापित नहीं करेगा, तबतक आत्मा हाथ नहीं आयेगा। अनुभवप्रकाश में कहा है कि - जबतक तू संयोग में राग में, पुण्य में, पाप में, निमित्त में या व्यवहार में कहीं भी प्रभुता स्थापित करेगा, बड़प्पन मानेगा तबतक आत्मा हाथ नहीं आयेगा, इसलिये अन्तर में अपनी प्रभुता का स्वीकार कर ! मैं ही परमेश्वर हूँ - ऐसा पहले निर्णय कर ! विश्वास ला।

जो वस्तु है उसके स्वभाव की सीमा नहीं होती, मर्यादा नहीं होती, उसे पराश्रय नहीं होता। जो स्वभाव है उसे पराश्रय क्यों होगा ? अचिंत्य स्वभाव में अपूर्णता क्यों होगी। यह भगवान आत्मा साक्षात् परमेश्वर का ही रूप है। परमेश्वर में तथा प्रत्येक भगवान आत्मा में कोई अन्तर नहीं है - ऐसे अपने आत्मा को जबतक दृष्टि में नहीं लेगा तबतक स्वसंवेदन प्रमाण नहीं हो सकेगा। जबतक अपने स्वभाव की महिमा से च्युत होकर परद्रव्य या पर भाव में कहीं भी किंचित माहात्म्य आयेगा तबतक महिमायुक्त अपना निज आत्मा हाथ नहीं आयेगा। जब जो पर्याय द्रव्य को दृष्टि में लेती है, उस पर्याय की महिमा का भी पार नहीं है, तब द्रव्य की महिमा का तो कहना ही क्या? ऐसी महिमा की जबतक प्रतीति नहीं होगी, तबतक वीर्य स्वसंवेदन की ओर नहीं मुड़ेगा।

पहले विकल्प सहित दृढ़ निश्चय तो करे कि राग से, निमित्त से, खण्ड-खण्ड ज्ञान से तथा गुण-गुणी के भेद से आत्मा ज्ञात नहीं होता - इसप्रकार पहले निर्णय का दृढ़ स्तम्भ लगाये ! उससे पर की ओर जाता हुआ वीर्य तो वहीं रुक जाता है, भले अभी स्वोन्मुख होना बाकी है ... विकल्प युक्त निर्णय में भी विकल्पयुक्त नहीं है - ऐसा पहले दृढ़ निश्चय करे। निर्णय पक्का होने पर राग अपंग हो जाता है, उसकी शक्ति कम हो जाती है। विकल्पयुक्त निर्णय में स्थूल कर्तृत्व छूट जाता है और फिर भीतर स्वानुभव में जाने पर निर्णय सम्यक्रूप होता है।

अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा वर्ष 2001 के पुरस्कारों के लिये नाम आमंत्रित

(1) अहिंसा इन्टरनेशनल डिप्टीमल आदीश्वर लाल जैन साहित्य पुरस्कार (राशि 31000) – जैन साहित्य के विद्वान को उनके समग्र साहित्य अथवा एक कृति की श्रेष्ठता के आधार पर । इसके लिये लिखित पुरस्कारों की सूची तथा अपनी 2 श्रेष्ठ पुस्तकें भेजें ।

(2) अहिंसा इन्टरनेशनल भगवानदास शोभालाल जैन शाकाहार पुरस्कार (राशि 21000) – शाकाहार प्रसार के क्षेत्र में कार्य कर रहे कर्मठ कार्यकर्ता को उनके कार्य की श्रेष्ठता के आधार पर ।

(3) अहिंसा इन्टरनेशनल रघुबीर सिंह जैन जीव रक्षा पुरस्कार (राशि 21000) – जीवरक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे कर्मठ कार्यकर्ता को उनके कार्य की श्रेष्ठता के आधार पर।

(4) अहिंसा इन्टरनेशनल प्रेमचंद जैन पत्रकारिता पुरस्कार (राशि 21000) – रचनात्मक जैन पत्रकारिता की श्रेष्ठता के आधार पर ।

नाम का सुझाव स्वयं लेखक/ कार्यकर्ता/ संस्था अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा 15 मार्च 2003 तक निम्न पते पर लेखक/ कार्यकर्ता/ पत्रकार के पूरे नाम व पते, जीवन-परिचय संबंधित क्षेत्र में कार्य सहित व पासपोर्ट आकार के फोटो सहित आमंत्रित हैं। पुरस्कार नई दिल्ली में भव्य समारोह में भेंट किये जायेगें। **सम्पर्क –** प्रदीपकुमार जैन, सचिव

4687, उमराव गली, पहाड़ी घीरज, नई दिल्ली
दूरभाष- 23531678 /23626813

नवीन पाठशालाओं का उद्घाटन

उदयपुरा(म.प्र.) रायसेन जिले में स्थित उदयपुरा गांव में 25 दिसम्बर को श्री तारण-तरण वीतराग-विज्ञान पाठशाला का उद्घाटन हुआ। यहाँ सिलवानी समाज द्वारा बच्चों के लिये पुस्तकें, पेन, कॉपी आदि पाठ्क्रम सामग्री वितरित कर पाठशाला का शुभारंभ किया।

कार्यक्रम का संचालन शिखरचंद जैन ने किया तथा निर्देशन पण्डित अरूण जैन 'अनु' शास्त्री मौ का रहा।

इसके पूर्व 24 दिसम्बर को सिलवानी में भी बच्चों की सुविधा हेतु तारण-तरण समाज के पदाधिकारियों द्वारा एक और पाठशाला का शुभारंभ किया गया। यह पाठशाला श्रीमती अनीता भरत पटेल के निवास सियरमऊरोड पर प्रारंभ हुई एवं श्रीमती अनीताजी ने बच्चों के सम्पूर्ण सहयोग के लिये आश्वासन दिया। कार्यक्रम का उद्घाटन पण्डित अरूण जैन 'अनु' शास्त्री ने किया।

'वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय' नाम रखा

राज्य सरकार ने कोटा के खुला विश्वविद्यालय का नाम परिवर्तन कर 'वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय' कोटा कर दिया है। इस संबंध में आवश्यक सूचना का प्रकाशन भी कर दिया गया है। भविष्य में इसे इस नये नाम से जाना जायेगा।

तीर्थदर्शन –

खजुराहो (म.प्र.)

मार्ग-स्थिति : छतरपुर से 50 कि. मी. स्थित है।

यहाँ चंदेलकालीन शिल्पकला कला का उत्कृष्ट निदर्शन मिलता है। यहाँ एक अहाते में 32 जैन मंदिर हैं। कहा जाता है कि यहाँ पहले 85 मंदिर थे, जिनमें से 53 नष्ट हो गये।

पूर्वी समूह में चार प्रसिद्ध मंदिर हैं -आदिनाथ, पार्श्वनाथ, शांतिनाथ और घंटई। मंदिरों की भीतरी और बाहरी भित्तियों, शिखरों, द्वार शाखाओं पर तीर्थंकर मूर्तियों के अतिरिक्त शासन देव-देवियों आदि की भी मूर्तियाँ बनी हुईं हैं। यहाँ के मंदिरों की मूर्तियों में 1000 वर्ष पुरानी अनेक मूर्तियाँ हैं। शांतिनाथ मंदिर में भगवान शांतिनाथ की लगभग 5 मीटर ऊँची अतिशयकारी प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त मुख्य भवन के पास ही साहू शान्तिप्रसाद जैन मूर्ति संग्रहालय है, जिसमें अनेक प्राचीन कलात्मक दर्शनीय प्रतिमायें संग्रहित हैं।

आवास एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था है।

पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा **'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम'** सत्र 1 जुलाई 2003 से प्रारंभ किया जा रहा है। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/ विषयों के प्राध्यापक अपभ्रंश, प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थाओं में कार्यरत विद्वान इसमें सम्मलित हो सकेगें। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक 25 मार्च से 15 अप्रेल 2003 तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर 302004 से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पहुँचने की अन्तिम तारीख 15 मई 2003 है।

– संयोजक, डॉ. कमलचंद सोगाणी

मध्यप्रदेश की पाठशालाओं का निरीक्षण सम्पन्न

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर के छात्रविद्वान् पण्डित अरूण जैन 'अनु' शास्त्री मौ द्वारा 13 दिसम्बर से 29 जनवरी तक ओवेदुलगंज, वैरसिया, सागर,बीना, गंजवासौदा, सिलवानी, उदयपुरा, रहली, गौरझामर, बंडा, बरा, विदिशा, वेगमगंज, दहेगांव, गढ़ाकोटा, मेनधरा, शाहगढ़, दलपतपुर, बड़ामलहरा, विनौता, केसली, घुवारा, बड़ागांव, धसान, सटई, पोहरी, लुकवासा, कोलारस, रन्नौद एवं करैरा ग्रामों का निरीक्षण किया गया।

प्रकाशन हेतु सामग्री भेजें

जैनदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली एक पत्रिका का प्रकाशन करने जा रहा है। जो इन दिनों जैन विद्या तथा प्राकृत भाषा से सम्बन्धित किसी भी विधा में, किसी भी विश्वविद्यालय अथवा विभाग में अथवा व्यक्तिगतरूप से कोई भी महत्त्वपूर्ण शोधकार्य, सम्पादन अथवा अनुवाद कार्य कर रहे हों, वे उसकी परिचयात्मक पूर्ण व प्रामाणिक जानकारी हमारे पास शीघ्र भेजें। हम उसे प्रकाशित करके गौरव का अनुभव करेंगे। प्रमाण हेतु अपने शोध निर्देशक का प्रमाणपत्र व सम्पर्क हेतु अपना पूरा पता, ई-मेल व फोन नम्बर भी भेजें।

– डॉ. अनेकान्त जैन, सह-सम्पादक, व्याख्याता-जैनदर्शन विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ,
कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली-16

सम्पादकीय -

सामाजिक एकता का ध्यान रखें

दिगम्बर जैन समाज अबतक वैशाली के निकट कुण्डग्राम को ही भगवान महावीर की जन्मस्थली के रूप में स्वीकार करता रहा है। ऐतिहासिक प्रमाण तो इसके पक्ष में हैं ही; दिग. जैन समाज का विद्वत्वर्ग भी अबतक एक स्वर से इसी को जन्मस्थली के रूप में मान्यता देता रहा है; किन्तु पता नहीं क्यों भगवान महावीर के 2600 वें जन्म महोत्सव के अवसर पर उनकी जन्म स्थली- उनके जन्मस्थान को विवादास्पद बनाया जा रहा है, जिससे दो मत होने से सामाजिक एकता दो भागों में बंटने से हानि की तो पूरी-पूरी संभावना है ही और लाभ कुछ भी नहीं है।

किसी स्थान विशेष से महावीर की महिमा तो कम-ज्यादा होगी नहीं और स्थान विशेष से वीतरागियों को राग होता नहीं है; फिर क्यों विवाद में पड़ रहे हैं। यह कुछ समझ में नहीं आ रहा है।

अभी-अभी हमें एक पत्रकार बन्धु द्वारा प्रेषित परिपत्र प्रकाशनार्थ प्राप्त हुआ है, जिसका हैडिंग है **पूर्वापर-विरोध की पराकाष्ठा**। प्रकाशित परिपत्र के अनुसार दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर द्वारा वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 214 के रूप में विदुषी आर्यिका चन्दनामती माताजी द्वारा लिखित तथा बाल ब्र. श्री रवीन्द्रकुमार जैन द्वारा सम्पादित पुस्तक **माता त्रिशला के अनोखे सपने (नाटक)** का प्रकाशन हुआ है। प्रस्तुत प्रकाशन के पृष्ठ 9 पर आदरणीया विदुषी आर्यिका माताजी ने स्पष्टत: वैशाली के कुण्डलपुर को ही स्वीकार किया है। प्रकाशित अंश निम्नप्रकार हैं -

'' मंत्री- महाराजजी ! हमारे इस वैशाली नगरी के निकट ही कुण्डलपुर नामक एक विशाल नगर है। वहाँ के धर्म परायण राजा सर्वार्थ के पुत्र युवराज सिद्धार्थ हैं जिनकी प्रशंसा आजकल दूर-दूर तक फैली हुई है। मेरी समझ में अपनी राजकुमारी त्रिशला के लिये वह युवराज पूरी तरह योग्य रहेंगे।''

परिपत्र में समाज के वरिष्ठ पत्रकार श्री पारसदास जैन की निम्न टिप्पणी भी है - '' भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में प्रकाशित इस नाटक **त्रिशलामाता के अनोखे सपने** में आर्यिका चन्दनामती माताजी ने एक प्रसंग का वर्णन किया है, जिसमें उन्होंने राजा चेटक, रानी सुभद्रा और मंत्री को चेटक की पुत्री राजकुमारी त्रिशला के लिये योग्य वर ढूंढने की चर्चा करते हुये दिखाया है।''

उपरोक्त तथ्य से यह स्पष्ट है कि उक्त लेखन तक तो लेखिका वैशाली कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकारती रही हैं; अत: पुन: एक बार अपनी स्वयं की विचारधारा और विद्वानों के प्रामाणिक लेखों पर तथा सामाजिक एकता को लक्ष्य में रखकर पुनरावलोकन करें। स्वयं को और समाज को सन्मार्ग दर्शन दें।

ऐसे विवादास्पद विषयों पर कोई भी टीका-टिप्पणी करना मेरी रुचि के अनुकूल नहीं है; किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि अप्रयोजनभूत विषयों के कारण समाज एवं संतशिरोमणियों और विद्वानों में मतभेद के साथ मन भेद न हो; अत: कटु भाषा एवं व्यंगोक्तियों का उपयोग तो कतई न हो - यह मेरी विनम्र प्रार्थना है।

- रतनचन्द भारिल्ल

धार्मिक प्रतियोगिताएँ सम्पन्न -

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर के प्रांगण में महाविद्यालय के अधीक्षक पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के निर्देशन में अनेक प्रतियोगितायें सम्पन्न हुईं। प्रतियोगितायें क्रमश: इसप्रकार हैं :-

(1) वादविवाद : (शास्त्री वर्ग) 24 जनवरी को आयोजित इस प्रतियोगिता का विषय 'वर्तमान में धर्माराधना असंभव' रखा गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री विनयकुमारजी पापड़ीवाल ने की। निर्णायक पण्डित सतीशकुमारजी शास्त्री थे । पुरस्कार विजेता क्रमश: पक्ष-विपक्ष से प्रथम अभिषेक जैन सिलवानी एवं आशीष जैन जबेरा, द्वितीय चिन्मय जैन पिड़ावा एवं विकाश जैन वानपुर तथा तृतीय नितिन भिण्ड एवं संतोष अंबड़ रहे। संचालन अनिल जैन मुंबई ने किया।

(2) वादविवाद : (उपाध्याय वर्ग) 25 जनवरी को आयोजित वाद-विवाद का विषय 'धर्म युवावस्था में होता है' रखा गया। कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री दिग. जैन संस्कृत महाविद्यालय के उप-प्राचार्य डॉ. सनतकुमारजी शास्त्री एवं निर्णायक पण्डित राजेशकुमारजी शास्त्री थे। इसमें क्रमश: पक्ष-विपक्ष से प्रथम विजय यादव, नितेन्द्र अकाझरी एवं राहुल अलवर, द्वितीय अंचल ललितपुर एवं जितेन्द्र चौगुले तथा तृतीय शाकुल मेरठ एवं आदित्य खुरई रहे। संचालन संतोष मिन्चे ने किया।

(3) श्लोक पाठ प्रतियोगिता : 26 जनवरी को आयोजित इस प्रतियोगिता की अध्यक्षता केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ के प्राध्यापक श्री सुदेशकुमारजी ने की। प्रतियोगिता के निर्णायक श्री सतीशकपूरजी थे। प्रथम संतोष मिन्चे, द्वितीय प्रशान्त उखलकर तथा तृतीय आशीष जबेरा एवं राहुल अलवर रहे। संचालन मनोज अभाना ने किया।

(4) तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता : 27 जनवरी को रखी गई प्रतियोगिता के अध्यक्ष डॉ. विमलकुमारजी शास्त्री तथा निर्णायक पण्डित शान्तिकुमारजीपाटील एवं पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री थे। इस प्रतियोगिता में शास्त्री वर्ग से प्रथम चिन्मय पिड़ावा, द्वितीय अभिषेक सिलवानी एवं तृतीय संतोष मिन्चे तथा उपाध्याय वर्ग से प्रथम किशोर धोंगड़े, द्वितीय संभव नैनधरा एवं तृतीय राहुल अलवर रहे। संचालन नितिन भिण्ड ने किया।

(5) काव्यपाठ (कविसम्मेलन) : 29 जनवरी को आयोजित प्रतियोगिता के अध्यक्ष श्री कैलाशचंदजी सेठी जयपुर थे तथा निर्णायक श्रीमती माधुरीजी 'ज्योति' एवं संजय शिक्षण-प्रशिक्षण महाविद्यालय की प्राध्यापिका श्रीमती प्रतीक्षाजी शर्मा रहीं। इसमें प्रथम आशीष जवेरा, द्वितीय देवेन्द्र अकाझरी एवं तृतीय विकास वानपुर रहे। सांत्वना पुरस्कार राहुल जैन अलवर एवं विमोश जैन खडैरी ने प्राप्त किया। संचालन नितिन जैन भिण्ड ने किया।

(6) भजन प्रतियोगिता : 30 जनवरी को आयोजित इस प्रतियोगिता की अध्यक्षता श्रीमती कमला भारिल्ल ने की ।निर्णायक श्रीमती ज्योति अजमेरा, श्रीमती समता गोदीका एवं श्री गौरव सौगाणी थे। इसमें प्रथम सुनील बेलोकर, द्वितीय निखिल कोतमा एवं तृतीय चिन्मय पिड़ावा एवं शाकुल मेरठ रहे ।

- संयोजक, मनोज जैन अभाना

तत्वचर्चा

समयसार का सार

62

गतांक से आगे

- डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

भाई ! जिन्हें भोग भोगने का रस है, वे मिथ्यादृष्टि है एवं उन्हें बंध होता ही है; लेकिन उन्हें बंध भोगने की क्रिया से नहीं; अपितु भोगने के भाव से बंध होता है।

जैसाकि इस समयसार कलश पद्यानुवाद में कहा है –

(हरिगीत)

कर्म करना ज्ञानियों को उचित हो सकता नहीं।
फिर भी भोगासक्त जो दुर्भुक्त ही वे जानिये।।
हो भोगने से बंध ना पर भोगने के भाव से।
तो बंध है बस इसलिए निज आतमा में रत रहो।।151।।

यद्यपि भोगने से बंध नहीं होता है, पर भोगने के भाव से तो बंध होता ही है। इसलिए हे जीव ! तू भोगने की भावना क्यों करता है ? अपने आत्मा में रमण क्यों नहीं करता है ? यह तो निश्चित है कि भोगने की क्रिया से बंध नहीं होता है; लेकिन भोगने का जो भाव हुआ, उससे तो बंध होता ही है।

महात्मा गांधी ने स्वराज्य प्राप्ति हेतु असहयोग आंदोलन चलाया। असहयोग आंदोलन के समय जब भी कोई विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न होती तब वे उपवास कर लेते थे। उन्हें जेल में डाल देते थे तो वे जेल में भी उपवास करते थे। अंग्रेज जानते थे कि यदि गांधीजी जेल में ही मर गए तो हिन्दुस्तान में जितने भी अंग्रेज हैं, उनमें से एक भी जिन्दा नहीं बचेगा। वे गांधीजी की लोकप्रियता के बारे में भली–भाँति परिचित थे। इसलिए अंग्रेज उन्हें हर हालत में सुरक्षित रखना चाहते थे। वे जानते थे कि यदि गांधीजी भोजन नहीं करेंगे तो गड़बड़ होगी; तब अंग्रेज उन्हें जबर्दस्ती दूध पिलाते थे; यदि वे पीते नहीं थे तो उनके मुँह में ऐसी नली डालते थे जिससे वह दूध अंदर चला ही जाता था।

यह देखकर अन्य कैदी भी ऐसा ही करने लगे। जब उन्हें बलात् दूध पिलाया जाता तो गटागट पी जाते।

गांधीजी और उन लोगों में बड़ा अंतर है ? गांधीजी को दूध जबर्दस्ती पिला दिया तो उनका उपवास भंग नहीं हुआ; लेकिन जिन्होंने दूध के लिए ही उपवास किया था, उनके और गांधीजी के उद्देश्य में कितना महद् अंतर है।

ज्ञानीजनों को तो भोग की रुचि नहीं है और अज्ञानी को भोग में रुचि है। अज्ञानी 'भोगने से बंध नहीं होता है' – ऐसा कहकर भोगने के भाव कर रहा है, भोगने की मान्यता कर रहा है; इसलिए वह तो बंध को प्राप्त होगा ही होगा।

भोग से बंध नहीं होता; इसलिए तू भोग ! यह उपदेश की भाषा नहीं; अपितु यह वस्तुस्वरूप का प्रतिपादन है कि ज्ञानी जीव जब भोग के काल में होता है, तब भी उसे बंध नहीं होता है।

आगे आचार्य कहते हैं कि ज्ञानीजन भोगते हैं कि नहीं भोगते हैं – यह हम नहीं जानते। इसका अर्थ यह है कि वे भोगों को भोगते नहीं हैं, वे तो भोगों को भुगतते हैं। इसे हम इस कलश पद्यानुवाद से और अधिक स्पष्ट समझ सकते हैं –

(हरिगीत)

जिसे फल की चाह ना वह करे – यह जंचता नहीं।
यदि विवशता वश आ पड़े तो बात ही कुछ और है।।
अकंप ज्ञानस्वभाव में थिर रहे जो वे ज्ञानिजन।
सब कर्म करते या नहीं – यह कौन जाने विज्ञजन।।153।।

जिसने कर्म का फल छोड़ दिया, वह कर्म करता है – ऐसी प्रतीति तो हमें नहीं होती; किन्तु यदि ज्ञानी को ऐसा कर्म अवशता से आ पड़ता है तो भी जो ज्ञानी अपने अकंप परमज्ञानस्वभाव में स्थित हैं, वह ज्ञानी कर्म करता है या नहीं; – यह कौन जानता है ?

इस कलश का भावानुवाद करते हुए पण्डित बनारसीदासजी ने तो ऐसा लिखा है कि –

(सवैया तेईसा)

जे निज पूरब कर्म उदै, सुख भुंजत भोग उदास रहैंगे।
जे दुखमैं न विलाप करैं, निरबैर हियैं तन ताप सहैंगे।।
है जिन्हकै दिढ़ आत्मज्ञान, क्रिया करकैं फल कौ न चहैंगे।
ते सु विचच्छन ग्यायक हैं, तिन्ह कौं करता हम तौ न कहैंगे।।

ज्ञानी भोगों को भोगते हुए भी उदास रहेंगे; अतः हम उन्हें कर्त्ता नहीं कहेंगे अर्थात् वस्तुतः ज्ञानी भोगों के अकर्त्ता हैं। यही कारण है कि ज्ञानी भोगों को नहीं भोगते हैं – ऐसा कहा जाता है; इसलिए उन्हें बंध भी नहीं होता है।

यदि इसका वास्तविक भाव नहीं समझें तो इन बातों को सुनकर अज्ञानी जीव का अनर्थ भी हो सकता है।

समयसार कच्चा पारा है, पच जाय तो भयंकर से भयंकर बीमारी दूर हो जाय और न पचे तो मर जाय।

आयुर्वेद में एक ब्राह्मी बूटी होती है, जो बहुत ही ठण्डी तासीर की होती है। जब शरीर में गर्मी चढ़ जावे, गर्मी चढ़ने से पागलपन हो जावे, हजारों दवाईयाँ खिलायें तो भी उनसे ठीक नहीं हो; तब अन्त में ब्राह्मी बूटी पिलायी जाती है। ब्राह्मी बूटी का प्रभाव ऐसा है कि उससे पागलपन दूर होता ही है। लेकिन इसमें समस्या है कि वह आसानी से पचती नहीं है। जो इसे पीता है, उसे उल्टी हो जाती है और उसके शरीर पर जहाँ भी उल्टी के छींटें पड़ जाय, वहीं कुष्ट रोग हो जाता है। इसलिए ऐसे रोगी को ब्राह्मी बूटी पिलाने की विधि ही अलग है।

बीमार व्यक्ति को नदी की धार में बिठाकर ब्राह्मी बूटी पिलायी जाती है। जिस तरफ पानी की धार हो, उस दिशा में उस रोगी की मुखमुद्रा रखी जाती है। उस व्यक्ति को पानी में गले तक डुबो दिया जाता है। फिर उस व्यक्ति को ब्राह्मी बूटी पिलाई जाती है। यदि पच गई तो बीमारी ठीक हो जाएगी और यदि नहीं पची तो उस पानी के बहाव के साथ उल्टी भी बह जायेगी, उस व्यक्ति के शरीर पर छींटें नहीं पड़ेंगे, वह व्यक्ति बच जाएगा।

यदि उल्टी भी हो गई; तब भी दवाई पेट में जाएगी तो थोड़ी बहुत तो रह ही जाएगी; गले में रह जाएगी, आँत में लगी रह जाएगी, आमाशय में लगी रह जाएगी; जितनी भी वह रह जाएगी, उतना ही वह लाभकारी सिद्ध होगी। ये इतनी खतरनाक औषधि है; फिर भी जब दूसरा कोई इलाज न हो, तब इसे पिलाना ही पड़ता है।

ऐसे ही समयसार ब्राह्मी बूटी है। जब मिथ्यात्व का भयंकर पागलपन हो गया हो तो समयसार की ब्राह्मी बूटी घूँट–घूँटकर पिलाई जाती है; लेकिन यह भी जगत को आसानी से नहीं पचती है।

सम्यग्दृष्टि के भोग निर्जरा हेतु हैं; परोपकार का भाव बंध का कारण है, वह धर्म नहीं है; एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता नहीं है; आजतक किसी ने पर में कुछ किया ही नहीं है; पाप के समान पुण्य भी हेय है; क्या समयसार में प्रतिपादित ये परमसत्य बातें सामान्य लोगों को पचने जैसी हैं। ऐसे ही सैंकड़ो तथ्य हैं, जो जगत के जीवों के गले नहीं उतरते, जैनियों के गले नहीं उतरते, यहाँ तक कि अनेक संतों के गले भी नहीं उतरते।

यहाँ कलश में लिखा है कि महाव्रत पालनेवालों, समिति पालनेवालों के गले नहीं उतरते – ऐसा यह अद्‌भुत सत्य है।

एक तो यह तथ्य गले में उतरता ही नहीं है। अंदर चला भी जाय तो पचता नहीं है।

कोई माता अपने बच्चे को दूध पिलाये और पचे नहीं, तब वह डॉक्टर के पास जाती है। डॉक्टर उससे पूछते हैं कि जब इसे दूध पिलाया जाता है, तब होता क्या है ? तब वह इन तीन में से ही एक उत्तर देती है कि दस्त लग जाते हैं, कब्जियत हो जाती हैं या उल्टी हो जाती है।

जब दस्त लगते हैं, तब वह कम से कम पेट में से तो गुजरती ही है; अतः वह अधिक खतरनाक नहीं है। जब कब्जियत हो जाती है; तब वह पेट में ही ठहर जाती है, निकलती नहीं है – यह भी उतनी अधिक खतरनाक नहीं है। सबसे अधिक घातक उल्टी है; क्योंकि शरीर इसे स्वीकार ही नहीं करता। उसे तुरंत बाहर फेंक देता है।

इसप्रकार अपचन की तीन मुख्य अवस्थाएँ हैं – कब्ज हो जाना, दस्त लग जाना एवं उल्टी हो जाना।

ऐसे ही समयसार नहीं पचता है – इसका अर्थ भी इसप्रकार समझ सकते हैं।

एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता नहीं है, ज्ञानी के भोग निर्जरा के हेतु हैं, पाप के समान पुण्य भी हेय है – इन परमसत्य बातों को सुनते ही कोई व्यक्ति खड़ा हो जाय और कहे कि क्या बकते हो ? तुम देश को बरबाद करोगे। तुम जैसे आदमी हमने नहीं देखे हैं। सबको नपुंसक बनाओगे क्या ? कोई किसी का कर्त्ता नहीं है, धर्त्ता नहीं है – ऐसी बातें करते हो। वैसे ही लोग कुछ काम नहीं करते हैं, आलसी हैं। उसमें भी तुम और आग लगाओगे।

इसप्रकार सभा में ही उठकर यदि अनाप–शनाप बकने लगे तो समझ लेना चाहिए की इन्हें उल्टी हो गई है।

कोई व्यक्ति सभा में तो नहीं बोले; लेकिन यह सत्य सुनते ही उस व्यक्ति का जी मिचलाये; उस दिन तो किसीप्रकार अरुचिपूर्वक सुन ले; पर दूसरे दिन उससे कहें कि 'चलो भैय्या ! प्रवचन सुनने चलें।' तब वह व्यक्ति कहता है कि – 'हमें नहीं जाना है, तुम्हीं जाओ, मरो ! क्या ऐसी बातें सुनने के लिए हम वहाँ जाएंगे।' उक्त तथ्य 24 घंटे तो उसके अंतर में रहा; लेकिन आत्मा ने उसे ग्रहण नहीं किया। शरीर ने उसे स्वीकार नहीं किया और पतले दस्तों की तरह वह बह गया।

यदि कोई व्यक्ति कहे कि 'भैय्या ! ये तो बहुत ऊँची बातें हैं।' तो समझ लेना चाहिए की अब इसे कब्जियत हो गई है। इसप्रकार समयसार के अपचन की भी यही तीन अवस्थाएँ होती है।

जिस व्यक्ति के ब्राह्मी बूटी शरीर में जाय एवं शरीर उसे स्वीकार कर ले; न दस्त लगे, न कब्जियत हो, न ही उल्टी हो तो अनिवार्यरूप से उस व्यक्ति का पागलपन दूर होगा ही होगा। इसीप्रकार जो समयसार के इस परमसत्य को स्वीकार करे। जिसे यह सुनकर महिमा आवे और अंतर में ऐसा भाव आये कि कितना अद्‌भुत, अपूर्व सत्य है। इसे सुनकर वह इसका चिंतन–मनन करना शुरू कर दे। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता–भोक्ता नहीं है और मैं आजतक व्यर्थ में ही विपरीत मान रहा था। आज मुझे सत्य समझ में आया।

यदि ऐसी स्थिति है तो समझ लेना चाहिए कि इस व्यक्ति को समयसार पच गया है। समयसार की ब्राह्मी बूटी पच गई तो अनादिकालीन अज्ञान भी अनिवार्यरूप से नष्ट होगा ही होगा।

ई. सन् 1967 में इन्दौर से पर्यूषण पर्व में प्रवचनार्थ मैं जयपुर आया था। उस वक्त भी मैंने इसी उदाहरण के साथ इस प्रकरण की चर्चा की थी। बड़े दीवानजी के मन्दिर में व्याख्यान कर रहा था और पण्डित चैनसुखदासजी उस सभा के अध्यक्ष थे। मेरे व्याख्यान के संदर्भ में उस दिन तो पंडितजी ने सभा में कुछ नहीं कहा; लेकिन अगले दिन उन्होंने सभा में कहा कि 'कल जो भारिल्ल साहब ने व्याख्यान में कहा था, वह शत–प्रतिशत सत्य है। मैंने ब्राह्मी बूटी के बारे में वैद्य से पूछा तो उन्होंने भी इस बात की पुष्टि की।'

पण्डित चैनसुखदासजी महान विद्वान थे। समाज में उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी। मैं तो उनके सामने बच्चा ही था। वे मेरे दादाजी के उम्र के थे, तब मेरी उम्र 30–32 वर्ष होगी और उनकी 60–65 वर्ष।

सब समझ रहे थे कि पंडितजी की यह बात सुनकर मैं बहुत प्रसन्न होऊँगा; लेकिन मैंने वहाँ एक बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य उजागर किया कि – 'यदि वह वैद्य मना कर देता और कहता कि आयुर्वेद में ऐसा नहीं है। तब क्या होता ? तब ये पंडितजी दूसरे दिन आकर कहते कि मैंने वैद्य से पूछा और वैद्य ने कहा कि ऐसी कोई जड़ी–बूटी नहीं होती है। तब मेरा क्या होता ?

यदि यह उदाहरण गलत भी निकल जाता तो मैं अच्छा वैद्य नहीं हूँ – यह सिद्ध होता; इस उदाहरण से मैंने जो सिद्धान्त प्रतिपादन किया है; क्या वह भी गलत हो जाता ? अरे भाई ! उदाहरण गलत होने पर मैं भले ही अच्छा वैद्य सिद्ध नहीं होता; परन्तु मेरे द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त सही होने से पंडित तो अच्छा ही हूँ, सच्चा ही हूँ।

उदाहरण तो हम कहीं से भी चुनते हैं, हम कोई आयुर्वेद के विद्वान थोड़े ही हैं। जो सुनते हैं, वह उदाहरण में ले लेते हैं। उदाहरण की सत्यता और झूठेपन से सिद्धान्त की असत्यता और सत्यता का नाप नही हो सकता है।'

सम्यग्दृष्टि के भोग निर्जरा हेतु हैं – यह न पचे ऐसा सिद्धान्त है; परंतु यदि इसका वास्तविक अर्थ गम्भीरता से समझें तो इसका रहस्य ख्याल में आए बिना न रहेगा। **(क्रमशः)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

104 वर्षीय विद्वान चुन्नीलालजी शास्त्री दिवंगत

चन्देरी, 6 फरवरी श्री अ. भा. दिग. जैन विद्वत्परिषद् एवं परवार महासभा के संरक्षक, 9 मार्च 1899 को जन्मे और 6 फरवरी 2003 को दिवंगत – इसप्रकार 19वीं, 20 वीं एवं 21वीं – इन तीन शताब्दियों को स्पर्श करने वाले वयोवृद्ध विद्वान पण्डित चुन्नीलालजी शास्त्री का वसंत पंचमी के दिन 104 वर्ष की आयु में समताभाव पूर्वक निधन हो गया।

आपने खुरई (म.प्र.) में अध्यापन आरंभ किया। वहाँ स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया और जेल गये। बाद में बीना, खनियांधाना तथा चन्देरी में अध्यापन कार्य किया। खुरई के महाराजा खलकसिंहजू देव के आग्रह पर आपने उनके पुत्र को शिक्षा-दीक्षा दी। डॉ.महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्य, पण्डित पन्नालालजी काव्यतीर्थ (कोलकाता), श्रीमंतसेठ, ऋषभकुमारजी खुरई आदि आपके प्रमुख शिष्यों में थे। आपने थूवौनजी क्षेत्र के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। चन्देरी में दिगम्बर जैन औषधालय की स्थापना की। चन्देरी मण्डल कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में आप राजनीति में भी सक्रिय रहे।

आपके चार पुत्र महेन्द्रकुमार (भू. पू. मण्डल अध्यक्ष भाजपा), जीवन्धर, जयकुमार तथा सुप्रसिद्ध लेखक डॉ. राजेन्द्र बंसल तथा दो पुत्रियाँ गुणमाला भारिल्ल एवं राजेश गुरहा हैं। समन्वय वाणी के सम्पादक प्रसिद्ध पत्रकार अखिल बंसल आपके पौत्र हैं।

अंत समय में मुनिश्री निर्वाणसागरजी ने घर जाकर उन्हें अनेकबार सम्बोधा। फलस्वरूप आपने समताभाव पूर्वक पद्मासन अवस्था में इस नश्वर देह का परित्याग किया।

स्मरण रहे कि विद्वत्परिषद् की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर दिल्ली के ऐतिहासिक रामलीला मैदान में सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी के सानिध्य में आपको स्वर्णपदक से सम्मानित किया गया था।

वैराग्य समाचार

1. कोटा निवासी श्री कमलचन्दजी जैन का जनवरी माह में देहावसान हो गया है। आप अच्छे स्वाध्यायी थे। कोटा मुमुक्षु मण्डल को आपका निरन्तर सक्रिय सहयोग रहता था। आपकी स्मृति में आपके परिवार द्वारा वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक को 202 रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

2. विगत माह जयपुर निवासी श्री सुरेन्द्रकुमारजी जैन का आकस्मिक स्वर्गवास हो गया है। आपकी स्मृति में श्रीमती इन्दु जैन मालपुरा वालों की ओर से जैनपथप्रदर्शक समिति को 201 रुपये एवं वीतराग-विज्ञान को 101 रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

3. मेरठ निवासी श्री जयनरायन जैन का स्वर्गवास हो गया है। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक समिति को 51 रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों – यही कामना है।

मिलापचंद डंडिया को भारतेन्दु पुरस्कार

ख्यातनामा पत्रकार श्री मिलापचंद डंडिया को भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुरस्कार** से सम्मानित किया है। यह पुरस्कार उनकी हाल ही में प्रकाशित पुस्तक **मुखौटों के पीछे** के लिये दिया गया है।

इस पुस्तक का विमोचन गत सितम्बर माह में उपराष्ट्रपति महामहिम श्री भैरोंसिह शेखावत ने किया था। उपराष्ट्रपतिजी ने श्री डंडियाजी की जागरुकता, निर्भीकता तथा कर्त्तव्यनिष्ठा की सराहना करते हुये तब कहा था कि श्री डंडिया जैसे 15-20 पत्रकार देश भर में हो जायें तो देश का कायापलट हो जाये।

साढ़े चार सौ पृष्ठों की यह पुस्तक श्री डंडिया की चुनिंदा पचास खोजपूर्ण रिपोर्टों को आधार बनाकर लिखी गई है।

उल्लेखनीय है कि जैन संस्कृति रक्षामंच के अध्यक्ष के रूप में श्री डंडिया द्वारा लिखित **जैन पुरातत्त्व के विध्वंस की कहानी** शीर्षक पुस्तक भी श्री डंडिया के साहसपूर्ण व प्रामाणिक लेखन का एक जीवन्त दस्तावेज है।

पद्मश्री से अलंकृत

आचार्यश्री विद्यानंदजी मुनिराज के पावन आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन में जैनसमाज एवं भारत-राष्ट्र की सेवा में तन-मन-धन से समर्पित सुप्रसिद्ध समाजसेवी एवं कुन्दकुन्द भारती न्यास के न्यासी धर्मानुरागी श्रीमान् ओमप्रकाशजी जैन को इस वर्ष गणतंत्र दिवस के सुअवसर पर **पद्मश्री** के अलंकरण से विभूषित किये जाने हेतु चयनित किया गया है।

श्री जैन को यह अलंकरण महामहिम राष्ट्रपतिजी के करकमलों से भव्य समारोह में यथासमय समर्पित किया जायेगा।

उनकी इस उपलब्धि के लिये पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट परिवार उन्हें बधाई देते हुये उनके उज्ज्वल भविष्य की मंगल कामना करता है।

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) फरवरी (द्वितीय) 2003
J.P.C. 3779/**02/2003-05**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा जयपुर**, एम.ए. (जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्मदर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर – 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127